प्रश्न :- आदिकाल के सामाजिक, सांस्कृतिक पक्ष का मूल्यांकन करें।

अथवा

आदिकालीन साहित्य विभिन्न परंपराओं, प्रवृत्तियों एवं भाषा रूपों के समन्वय का साहित्य है।

उत्तर :- साहित्य के इतिहास का एक महत्त्वपूर्ण पक्ष यह है कि इसमें परंपराओं के उदय, उन्नति और परिवर्तन का क्रम चलता रहता है। साहित्य के विकास में यदि नयी परंपराएँ जन्म लेती हैं तो पुरानी परिवर्तित भी होती हैं। नयी रचनाशीलता से यदि कुछ परंपरायें टूटती हैं तो कुछ बनती भी हैं। हिन्दी साहित्य के ~~इतिहास~~ में आदि काल में कई परंपरायें विकसित हुईं। सामाजिक विषमता के विरोध में और उच्च विचारधारा से युक्त एक परंपरा बनी, ~~सिद्धों~~ नाथों की वाणियों से निकलीं। दूसरी परंपरा वीरगाथाओं से चली, एक तीसरी परंपरा आल्हा जैसे

MAR 2003
S M T W T F S S M T W T F S
1 2 3 4 5 6 7 8
9 10 11 12 13 14 15 16 17 18 19 20 21 22
23 24 25 26 27 28 29 30 31

Scanned with CamScanner

वीर गीतों की थी जो लोक का आश्रय लेकर आगे बढ़ी। चौथी परंपरा अमीर खुसरो की पहेलियों से पैदा हुई, इसका उद्देश्य लोकरंजन था। पाँचवीं परंपरा विद्यापति के पदों में मिलती है। इन विविध परंपराओं के परस्पर विरोध और सामंजस्य से आगे परंपराओं के प्रगति की प्रक्रिया चलती रही।

आदिकालीन साहित्य जनभाषा में जनभावनाओं की अभिव्यक्ति का साहित्य है। इनका विकास संस्कृत साहित्य और उसकी आभिजात्य संस्कृति से बहुत हद तक स्वतंत्र रूप से हुआ। यह साहित्य भाषा, कथ्य और क्षेत्र के लिहाज से व्यापकता लिए हुए है। रासो काव्य पश्चिम में लिखे गये। वहाँ आक्रमण पर आक्रमण के कारण परिस्थितियाँ बदली हुई थीं। राजनीतिक सैन्य चुनौतियों के सामने वहाँ वीरगाथायें ही लिखी जा सकती थीं। पूरब में अपेक्षाकृत शांति थी। यहाँ बंगाल, बिहार में वज्रयानी सिद्ध, नाथ और योगी सहज शून्य की साधना में लगे थे। पश्चिम के साहित्य में यदि ऐहिकता है तो पूरब के सिद्धों-नाथों में आध्यात्मिकता है। पूरब में ही ~~कवि~~ विद्यापति यदि 'पदावली' में शृंगार से भक्ति का मेल बिठा रहे थे तो पश्चिम में रासो कवि शृंगार के साथ वीर रस का मूल्य आंक रहे थे।

अमीर खुसरो दिल्ली में बैठकर पहेलियां बुझा रहे थे। पश्चिम में प्रबंध काव्य रूप का प्राधान्य है तो पूरब में मुक्तक काव्य रूप का। पूरब के ही विद्यापति एक ओर यदि पदावली में प्रगीत मुक्तक लिख रहे थे तो दूसरी तरफ कीर्तिलता, कीर्तिपताका में प्रबंध काव्यरूप को आजमा रहे थे। पश्चिम में रासो कवियों की प्रबंधात्मकता के साथ मुक्तक काव्य रूप का संतुलन बैठाने के लिए ही खुसरो ने पहेलियाँ, मुकरियाँ, दो सखुने आदि लिखे। काव्य प्रवृत्तियों और काव्य रूपों के लिहाज से आदिकालीन साहित्य समन्वय और सामंजस्य बनाते चलता है। इसकी बड़ी

JAN 2003
S M T W T F S S M T W T F S
1 2 3 4 5 6 7 8 9 10 11 12 13 14 15 16 17 18 19 20 21 22 23 24 25 26 27 28 29 30 31

Scanned with CamScanner

भौगोलिक व्याप्ति इसके सामंजस्य में कहीं बाधक नहीं बनती।

आदिकालीन साहित्य के सामाजिक, सांस्कृतिक चरित्र की समन्वयकारिता को समझने के लिए आचार्य द्विवेदी का यह कथन बहुत उपयोगी है; "भारतीय भाषाओं में हिन्दी ही एक भाषा है जिसके साहित्य में पश्चिमी प्रदेश के आर्यों की रूढ़िप्रियता और कर्मनिष्ठा के साथ-साथ पूर्वी आर्यों की विद्रोहवृत्ति, भावप्रवणता एवं प्रेमदशा का मणिकांचन योग हुआ है।"

आदिकालीन साहित्य की सामाजिक संस्कृति को समझने के लिए 'भाषा' शब्द बहुत उपयोगी है। इस काल के किसी कवि ने अपनी भाषा को क्षेत्रिय नाम से अभिहित नहीं किया। विद्यापति मैथिली में लिख रहे थे लेकिन उन्होंने उसे मैथिली न कहकर 'भाषा' कहा; "बालचन्द बिज्जावइ भाषा दुहु नहिं लग्गइ दुज्जन हासा"। चंदबरदायी लाहौर के रहने वाले थे, पृथ्वीराज के आश्रित बनकर दिल्ली में रहा करते थे उनकी भाषा में लाहौरी, देहलवी और राजस्थानी का भी तत्त्व है। उन्होंने अपनी भाषा को 'षट्भाषा' कहा है। षट्भाषा का मतलब छह भाषा नहीं है, विभिन्न स्रोतों से आयी हुई भाषा है। ऐसी भाषा में जिसमें विभिन्न जनपदों के भाषायी तत्त्व समाहित हैं। यह भाषा ~~बहुसामुदायिक~~ बहुसामुदायिक समाज की सामासिक संस्कृति की अभिव्यक्ति की भाषा है। सिद्धों-नाथों की वाणियों में यदि विभिन्न प्रदेशों की शब्द-सम्पदा समायी हुई है तो इसलिए कि उनके घुमन्तु चरित्र के कारण उसमें सामासिक संस्कृति के तत्त्व अनायास आ गये हैं।

भारत के उथल-पुथलवाले समाज में अमीर खुसरो का सामन्वय संभावना की तरह एक क्षितिज पर स्थित है। धर्म की सीमायें सिकुड़ती-फैलती हैं। इतिहास हमारे सामने

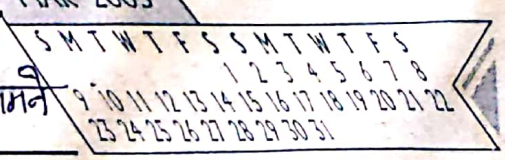

Scanned with CamScanner

तरह-तरह की समस्याएँ उठाता है। इन समस्याओं के समाधान के क्रम में भावनाओं और विचारों की सीमायें फैलती-सिकुड़ती हैं। इसी क्रम में यह समझना चाहिए कि धर्मनिरपेक्षता हमारे यहाँ एक परिभाषित विचार नहीं है। वह एक प्रक्रिया है। धर्मनिरपेक्षता की एक प्रक्रिया हिन्दू-मुस्लिम रिश्ते को लेकर चली। इसमें विभाजन भी है और समझौता भी, द्वन्द्व और तनाव भी है, समन्वय भी इसकी जड़ मध्यकाल के इतिहास में है। खुसरो ने हिन्दू-मुसलमानों की विभाजकता को खत्म करने के लिए ही समाज के निचले स्तर पर अपनी पहेलियों और मुकरियों के द्वारा हिन्दू-मुसलमानों के अजनबीपन को दूर करने का प्रयास किया। उन्होंने यहाँ की संस्कृति को जाना, समझा और सराहा। वे लिखते हैं कि "मैंने संस्कृत साहित्य की एक बूँद चखी है और पाया है कि घाटी में खोया पानी महानदी के विस्तार से अबतक वंचित था।" खुसरो का साहित्य एक ओर दरबार में बैठकर लिखा गया तो दूसरी ओर औलिया के मठ में बैठकर। उन्होंने एक ओर यदि साहित्य और संगीत का समन्वय किया तो दूसरी ओर हिन्दी और फारसी को करीब लाने की कोशिश की। उनके कुछ दो सखुने ऐसे हैं जिनकी एक पंक्ति फारसी में लिखी जाती है तो दूसरी खड़ी बोली में। क्या इसी बहाने खुसरो हिन्दू से मुसलमान को और हिन्दी से फारसी को जोड़ने का काम नहीं करते?

"चु चश्मसोजाँ चु जर्रः हैराँ हमेशा गिरियाँ ब अश्के आँ:,
न नींद नयना, न अंगचैना, न आप आये, न भेजी पतियाँ।"

अमीर खुसरो ने ब्रजभाषा में जो गीत और कव्वाली लिखे उनमें आध्यात्मिकता के साथ-साथ लोकजीवन के विविध रंग समाये हुए हैं। उनके दो सखुने हिन्दू-मुसलमानों दोनों के लिए मार्गदर्शन का काम करते रहे हैं।

Scanned with CamScanner

आदिकाल में विभिन्न धर्म सहअस्तित्व और सामंजस्य बनाये हुए हैं। एक साथ हम यहाँ बौद्धों, जैनों, हिन्दुओं और मुसलमानों को रचनाशील पाते हैं। सिद्धों और नाथों को निरक्षर, अटपटी वाणी बोलने वाला समझना भूल है। उनमें से अधिकांश ने नालंदा और विक्रमशिला विश्वविद्यालय से उच्च शिक्षा पायी थी। सरहपा, कन्हपा, भुसुकपा आदि नालंदा में ही शिक्षित हुए, उसे ही अपना कर्मक्षेत्र बनाया। सरहपा तो नालंदा विहार के प्रधान पुरोहित थे। दीपंकर श्रीज्ञान ने नालंदा और विक्रमशिला दोनों विश्वविद्यालय से शिक्षा पायी थी। ये सिद्ध और नाथ इस देश के विभिन्न प्रदेशों से नालंदा में इकट्ठा हुए थे और यहीं सामाजिक वैषम्य मिटाने में जुट गये। ये उस समय के सामाजिक दार्शनिक हैं। इन्होंने हिन्दू धर्म के अंधविश्वासों, जातियों के खिलाफ दुर्धर्ष (कठिन) संघर्ष किया। ये सामाजिक विषमता के साथ-साथ आर्थिक विषमता भी मिटाने के लिए जद्दोजहद करते रहे। इन्होंने हर विषमता का उत्तर मध्य-मार्ग में ढूँढा। जालंधरनाथ का यह कथन आर्थिक वैषम्य मिटाने में उनकी गंभीरता का एहसास दिलाता है।—

"थोड़ा खाय सो कलपै-फलपै, घनौं खाय सो रोगी।"

हिन्दू और मुसलमानों में टकराव देखकर गोरखनाथ ने सबसे पहले कहा- हिन्दू और मुसलमान दोनों प्रभु की संतान हैं। हिन्दू, मुसलमानों और योगियों में खूनी कट्टरता को खत्म करने के लिए उन्होंने कहा- "हम जनम से हिन्दू हैं, जीर्णता और परिपक्वता से योगी हैं और अक्ल से मुसलमान हैं।" नाथपंथ आसाम से अफगानिस्तान तक फैला था। नाथपंथ में महंथ को 'पीर' कहा जाता है। इससे धार्मिक सामंजस्य और समन्वय की गंध आती है। उस समय का प्रसिद्ध हिन्दू कवि चंदवरदायी हिन्दू साम्प्रदायिकता की बात नहीं करता।

MAR 2003

S	M	T	W	T	F	S	S	M	T	W	T	F	S
						1	2	3	4	5	6	7	8
9	10	11	12	13	14	15	16	17	18	19	20	21	22
23	24	25	26	27	28	29	30	31					

Scanned with CamScanner

20 THURSDAY FEBRUARY 2003

उसने पृथ्वीराज रासो में पृथ्वीराज और मो० गोरी की लड़ाई को हिन्दू और तुर्क की लड़ाई का रूप नहीं दिया। वह लड़ाई तो दो वीरों के बीच है। आक्रांत और आक्रांता के बीच। निष्कर्षतः कह सकते हैं कि आदिकाल का साहित्य भाव, भाषा, कथ्य, परंपरा और प्रवृत्ति के लिहाज से समन्वय का साहित्य है।